दैनिक भास्कर

***Date:04-11-22***

# गिरते संकेतकों के दौर में कुशलता का परीक्षण

**संपादकीय**

अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष ने दुनिया को आर्थिक मंदी के आसन्न संकट से आगाह किया है और भारत की विकास दर को घटाकर 6.8% कर दिया है। उधर आरबीआई ने भी पहले ही अनुमानित विकास दर कम की है। यह सच है कि पूरी दुनिया में आर्थिक मंदी का भय विकराल रूप लेता जा रहा है, लेकिन यह माना जाता था कि कोरोना का प्रभाव दक्षिण एशिया खासकर भारत में इतना भयंकर न होने के कारण और टीके की व्यवस्था सुचारु होने से इस देश पर आर्थिक चोट का असर कम होगा। लेकिन हाल के आंकड़े इस भरोसे को डिगा रहे हैं। ताजा पीएमआई रिपोर्ट के अनुसार सेवा क्षेत्र ने पिछले छह महीने की सबसे बड़ी गिरावट दर्ज की है। उधर अतिवृष्टि, अनावृष्टि और असमय वृष्टि की प्राकृतिक आपदा ने कृषि क्षेत्र में गिरावट के संकेत दिए हैं। इसी क्षेत्र ने देश को कोरोना काल में भी बेहतर प्रदर्शन कर संकट से उबारा था। एमएसएमई सेक्टर पिछले दो वर्षों की मार से निकल नहीं पा रहा है, जिससे बेरोजगारी बढ़ती जा रही है। इस वर्ष अप्रैल से अगस्त के बीच चालू खाता घाटा, व्यापार घाटा और राजकोषीय घाटा तीनों बढ़ते जा रहे हैं। खाद्य महंगाई भी गरीब वर्ग को बुरी तरह प्रभावित कर रही है। इन सबसे देश को निकालना सरकार की नीति की कुशलता पर निर्भर करेगा।

---

दैनिक जागरण

***Date:04-11-22***

# भ्रष्टाचार पर अंकुश

**संपादकीय**

केंद्रीय सतर्कता आयोग के एक आयोजन में प्रधानमंत्री ने यह जो कहा कि निहित स्वार्थों वाले लोग भ्रष्टाचार और भ्रष्टाचारियों के विरुद्ध कार्रवाई करने वाली संस्थाओं एवं एजेंसियों के काम में बाधा डालने और उन्हें बदनाम करने की कोशिश करते रहेंगे, उससे भ्रष्ट तत्वों के दुस्साहस का ही पता चलता है। इससे यह भी पता चलता है कि अभी वैसी स्थितियां बनी हुई हैं, जिसमें भ्रष्टाचारी सरकारी एजेंसियों को बदनाम करने में सक्षम हो जाते हैं। इन स्थितियों को प्राथमिकता के आधार पर दूर किया जाना चाहिए, क्योंकि आदर्श स्थिति यही है कि भ्रष्ट तत्व भ्रष्टाचार निरोधक एजेंसियों से भयभीत दिखें। यह ठीक है कि प्रधानमंत्री ने इन एजेंसियों को अपना पूरा समर्थन देने और खुलकर काम करने का संदेश दिया, लेकिन ऐसा कोई संदेश भ्रष्ट तत्वों के बीच भी जाना चाहिए कि उन्हें उनके किए की सजा मिलकर रहेगी और वे बच नहीं सकेंगे। इसी के साथ यह भी देखा जाना चाहिए कि सरकारी एजेंसियां अनियंत्रित न होने पाएं और वे भ्रष्टाचार पर अंकुश लगाने के नाम पर लोगों का उत्पीड़न न करने लगें। भ्रष्टाचार निरोधक एजेंसियों को सक्षम बनाने के साथ यह सुनिश्चित करना भी आवश्यक है कि भ्रष्टाचार के आरोप में पकड़े गए लोगों को समय रहते सही सजा मिले। आम तौर पर अभी ऐसा नहीं होता। ऐसे लोगों के मामले लंबे समय तक खिंचते रहते हैं। इससे समाज को कोई सही संदेश नहीं जाता।

इससे संतुष्ट नहीं हुआ जा सकता कि विभिन्न एजेंसियां भ्रष्टाचार में लिप्त तत्वों के यहां छापेमारी करती रहती हैं, क्योंकि इसके बाद भी ऐसे कोई प्रमाण नहीं दिख रहे हैं कि भ्रष्टाचार पर कोई निर्णायक लगाम लगती दिख रही हो। यह ठीक है कि केंद्र सरकार के उच्च स्तर पर भ्रष्टाचार पर एक हद तक लगाम लगी है, लेकिन यह नहीं कहा जा सकता कि उसके लिए कहीं कोई गुंजाइश नहीं रह गई है। इसी तरह यह भी नहीं कहा जा सकता कि निचले स्तर के भ्रष्टाचार में कोई बड़ी कमी आई है। सच यह है कि निचले स्तर पर भ्रष्टाचार बेरोक-टोक जारी है। जैसे निर्माण कार्यों में भ्रष्टाचार खत्म होने का नाम नहीं ले रहा है, वैसे ही रोजमर्रा के उस भ्रष्टाचार पर भी, जिससे आम लोग दो-चार होते हैं। भ्रष्टाचार पर प्रभावी नियंत्रण के लिए यह आवश्यक है कि उन कारणों का निवारण किया जाए, जिनके चलते वह पनपता और फलता-फूलता है। इससे इन्कार नहीं कि तकनीक के इस्तेमाल ने व्यवस्था को पारदर्शी बनाने का काम किया है, लेकिन अभी इस क्षेत्र में बहुत काम किए जाने की आवश्यकता है। ऐसी ही आवश्यकता राजनीतिक भ्रष्टाचार पर अंकुश लगाने के मामले में भी है। सरकार कुछ भी दावा करे, यह कहना कठिन है कि चुनावी बांड की व्यवस्था के बाद राजनीतिक चंदे की प्रक्रिया पारदर्शी बन गई है।

---

***Date:04-11-22***

# संभव है दूसरी पीली क्रांति

**रमेश कुमार दुबे, ( लेखक लोकनीति विश्लेषक एवं कृषि मामलों के जानकार हैं )**

जेनेटिक इंजीनियरिंग अप्रूवल समिति यानी जीईएसी द्वारा जेनेटिकली मोडिफाइड (जीन संवर्धित-जीएम) सरसों की खेती को मंजूरी देने की सिफारिश करने के साथ ही इसका समर्थन और विरोध शुरू हो गया है। जहां समर्थक उत्पादन में बढ़ोतरी का दावा कर रहे हैं, वहीं विरोधियों का तर्क है कि जीएम सरसों के पर्यावरणीय प्रभाव आकलन को सार्वजनिक नहीं किया गया और इसके पैदावार संबंधी दावे संदिग्ध हैं। उल्लेखनीय है कि मांग के अनुरूप घरेलू उत्पादन न होने से देश में खाद्य तेल का आयात लगातार बढ़ रहा है। भारत अपनी जरूरत का 65 प्रतिशत खाद्य तेल आयात करता है। इसमें सबसे ज्यादा हिस्सा पामोलीन और सूरजमुखी के तेल का होता है। खाद्य तेल महंगाई के दौर में केंद्रीय पर्यावरण मंत्रालय के अधीन काम करने वाली जीईएसी ने देश में जीएम सरसों धारा मस्टर्ड हाइब्रिड 11 (डीएमएच 11) की खेती को हरी झंडी दिखाई है। जीएम सरसों पहली खाद्य फसल है जिसकी ऐसी खेती की अनुमति मिली है। सरकार से मंजूरी मिलने के बाद इसका फील्ड ट्रायल होगा, फिर इसे व्यावसायिक रूप से जारी किया जाएगा।

इसके पहले 2017 में भी जीएम सरसों के फील्ड ट्रायल को अनुमति दी गई थी, लेकिन किसान संगठनों के विरोध और सुप्रीम कोर्ट द्वारा रोक लगाए जाने के बाद इसे वापस ले लिया गया था। कमोबेश यही हश्र बीटी बैंगन का भी हो चुका है। डीएमएच 11 सरसों को दिल्ली विवि में सेंटर फार जेनेटिक मैनिपुलेशन आफ क्राप प्लांट्स द्वारा विकसित किया गया है। यह दावा किया जा रहा है कि डीएमएच 11 सरसों की मौजूदा किस्मों के मुकाबले 30 प्रतिशत अधिक उत्पादक है। डीएमएच 11 में दो एलियन जीन होते हैं। इन्हें एक जीवाणु से अलग किया जाता है। यह ज्यादा उपज देने वाले सरसों के प्रजनन को सक्षम बनाता है। इन्हीं विशेषताओं के चलते आस्ट्रेलिया ने भारतीय जीएम सरसों की वाणिज्यिक खेती की अनुमति दे दी है।

सरसों की मौजूदा घरेलू किस्मों की औसत उत्पादकता 1.2 टन प्रति हेक्टेयर है, जबकि वैश्विक औसत दो से 2.20 टन है। यह दावा किया जा रहा है कि जीएम सरसों की खेती से देश की खाद्य तेल आयात पर निर्भरता कम होगी। देश में 65-70 लाख हेक्टेयर भूमि पर सरसों की खेती की जाती है। जीएस सरसों के समर्थक भले ही अधिक पैदावार के दावे करें, लेकिन देश में जीएम सरसों से अधिक पैदावार देने वाली सरसों की देसी किस्मों भी मौजूद हैं। सिस्टम आफ मस्टर्ड इंटेसीफिकेशन-एसएमआइ तकनीक से मध्य प्रदेश के उमरिया जिले में 10,000 किसान सरसों की खेती कर रहे हैं, जिनकी पैदावार चार से 4.5 टन प्रति हेक्टेयर है। इसके विपरीत जीएम सरसों डीएमएच 11 की औसत पैदावार 2.6 टन प्रति हेक्टेयर होने के दावे हैं। बिहार, ओडिशा और बंगाल के किसान भी मप्र वाली तकनीक से सरसों उगा रहे हैं। सरसों की चार देसी किस्मों डीएमएच 1, 2, 3, 4 की पैदावार जीएम सरसों से ज्यादा है। वहीं देसी सरसों की 664 किस्में चिन्हित की गई हैं, जिन्हें एसएमआइ पद्धति से बोया जाए तो बेहतर परिणाम मिलेंगे।

जीईएसी ने दावा किया है कि जीएम सरसों हर्बिसाइड टालरेंट है। सच्चाई यह है कि यह तकनीक मिट्टी, रोगाणुओं, पालिनेटर्स और औषधीय जड़ी-बूटियों को मार देती है। कई अध्ययन हैं, जो बताते हैं कि जीएम फसलों के हानिकारक प्रभाव होते हैं। मधुमक्खी पालन से जुड़े संगठन भी जीएम सरसों का विरोध कर रहे हैं। उनका कहना है कि इससे शहद की खेती पर बुरा असर पड़ेगा। मधुमक्खियों के परागण में सरसों के फूलों का अहम योगदान है। अधिकतर जगहों पर जीएम मुक्त सरसों के शहद की मांग है। छोटी जोत के जो किसान पारंपरिक बीजों के सहारे खेती करते हैं, वे महंगे बीजों को नहीं खरीद पाएंगे। इन बीजों को दोबारा इस्तेमाल नहीं किया जा सकेगा। इससे स्थानीय किस्मों के लिए खतरा पैदा हो सकता है। स्पष्ट है कि इन चिंताओं का समाधान करना होगा।

वास्तव में किसानों को जीएम बीज की नहीं सिंचाई, उन्नत तकनीक, सूचना प्रौद्योगिकी, ग्रामीण सड़कों, बिजली, कोल्ड चेन और आधुनिक मंडी की जरूरत है। मोदी सरकार राष्ट्रीय कृषि बाजार ई-नाम, ग्रामीण सड़क, बिजली, सिंचाई, फसल बीमा, किसान रेल, किसान उड़ान जैसी मूलभूत सुविधाओं को बढ़ा रही है, लेकिन कृषि क्षेत्र में तब तक क्रांतिकारी सुधार नहीं आएगा, जब तक राज्य सरकारें ठोस जमीनी पहल नहीं करती हैं। राज्य सरकारों का पूरा जोर गरीबी की रेखा के नीचे रहने वाले परिवारों की तादाद बढ़ाने, कर्ज माफी जैसी वोट बटोरने वाली योजनाओं पर रहता है। इससे उदारीकरण का लाभ गांवों तक नहीं पहुंच पा रहा।

विचारणीय है कि जो देश 1995 तक खाद्य तेल में आत्मनिर्भर था, वह दुनिया का सबसे बड़ा खाद्य तेल आयातक कैसे बन गया? इसकी जड़ें व्यापार नीतियों में हैं। दक्षिण पूर्व एशियाई देशों के साथ वरीयता व्यापार समझौतों के तहत आयात शुल्क में कमी की गई, जिससे देश में सस्ता खाद्य तेल आने लगा। इसका दुष्परिणाम यह हुआ कि घरेलू तिलहनों की खरीद प्रभावित हुई। जो सरसों नकदी फसल के रूप में पीला सोना के रूप में विख्यात थी, वह घाटे का सौदा बन गई। रही-सही कसर सरसों तेल में आर्जीमोन की मिलावट की अफवाह ने पूरी कर दी। इसने जहां सरसों के तेल को बदनाम किया, वहीं सोयाबीन और पामोलीन तेल की राह आसान कर दी। यदि गेहूं-धान की भांति तिलहन फसलों की एमएसपी पर सुनिश्चित सरकारी खरीद की देशव्यापी व्यवस्था की जाए तो सरसों की देसी किस्मों के जरिये भी दूसरी पीली क्रांति संभव है।

---

जनसत्ता

***Date:04-11-22***

# जवाबदेही के बजाय

**संपादकीय**

अब जब साफ हो चुका है कि गुजरात के मोरबी में झूलता पुल उसके रखरखाव की जिम्मेदारी संभाल रही कंपनी की घोर लापरवाही की वजह से टूटा, तब भी उस कंपनी के एक प्रबंधक इसकी जिम्मेदारी 'भगवान' पर डाल कर मुक्त हो जाना चाहते हैं। ओरेवा नामक कंपनी को इस पुल की मरम्मत, रखरखाव और उस पर लोगों की आवाजाही की व्यवस्था संभालने की जिम्मेदारी सौंपी गई थी। यह काम बिना कोई निविदा आमंत्रित किए दे दिया गया था। ओरेवा दीवार घड़ी, मच्छर मारने का रैकेट और कैलकुलेटर जैसी चीजें बनाने का काम करती है। स्वाभाविक ही सवाल उठा कि उसे पुल की मरम्मत और रखरखाव का काम सौंपा ही क्यों गया। अब यह भी पता चला है कि ओरेवा ने जिस कंपनी की मदद से पुल की मरम्मत कराई, उसे भी झूलता पुल बनाने का कोई अनुभव नहीं था। उसने केवल मामूली रंग-रोगन करके अपनी जिम्मेदारी पूरी कर दी। फिर बिना अनापत्ति प्रमाण-पत्र लिए पुल को आनन-फानन में खोल दिया गया। अब फोरेंसिक विभाग की जांच में पता चला है कि पुल जिन लोहे की रस्सियों पर लटका था वे काफी पुरानी हो चुकी थीं, उन्हें जंग खा रहा था। उनमें लोच बिल्कुल नहीं रह गई थी। उनमें लगे नट-बोल्ट जर्जर हो चुके थे। कायदे से उन्हें बदला जाना चाहिए था, मगर ऐसा करना तो दूर, उनमें तेल, ग्रीस आदि लगाने की जरूरत भी नहीं समझी गई। लापरवाही और अनदेखी के

इतने सबूत मिलने के बाद भी अगर उस कंपनी के एक प्रबंधक अदालत में खड़ा होकर यह कह रहे हैं कि भगवान की करनी की वजह से पुल टूटा, तो उनकी ढिठाई को समझा जा सकता है।

आमतौर पर हादसों को 'भगवान की मर्जी' कह कर टालने की कोशिश की जाती है। कई बार जांचों का सिरा भी इसी बिंदु को पकड़ कर चल पड़ता है। इस तरह ऐसे बड़े हादसों पर परदा डालना आसान हो जाता है। इसलिए साफ है कि कंपनी के प्रबंधक ने नासमझी में उस हादसे का दोष भगवान पर नहीं डाला। ऐसा कहने के लिए उनके वकील ने सलाह दी होगी। इस तरह अदालत का ध्यान भटकाना आसान हो जाता है। कई मामलों में हादसों के पीछे 'भगवान की मर्जी' वाला तर्क कानूनी रूप से स्वीकार भी कर लिया जाता है। मगर मोरबी हादसे के पीछे जितने पुख्ता सबूत सामने आ चुके हैं, उन्हें देखते हुए शायद ही यह बात किसी के गले उतरे कि वह पुल संयोगवश टूट गया।

जिस दिन पुल टूटा, उसी दिन से तथ्य उजागर हैं कि ओरेवा कंपनी के मालिक कितने रसूखदार हैं। उन्हें उस पुल के रखरखाव और संचालन का ठेका कैसे मिला होगा। यह भी छिपी बात नहीं है कि पुलों, सड़कों आदि के निर्माण, टोल नाकों पर कर संग्रह आदि के ठेके कैसे लोगों को मिलते हैं। ओरेवा इस मामले में अपवाद नहीं मानी जा सकती। ऐसे ठेकों में भारी कमीशनखोरी और खराब गुणवत्ता की सामग्री तथा तकनीक इस्तेमाल करने के तथ्य भी छिपे हुए नहीं हैं। फिर जब ऐसे निर्माण और रखरखाव में खामी की वजह से कोई बड़ा हादसा हो जाता है, तो उस ठेके से जुड़े तमाम लोग उस पर परदा डालने में जुट जाते हैं। जांचों को प्रभावित किया जाता है और अंतत: पुख्ता सबूतों के अभाव में दोषी बेदाग करार दे दिए जाते हैं। मोरबी पुल हादसे के मामले में अगर ऐसा न हो, तो एक नजीर कायम हो सकती है।

---

राष्ट्रीय सहारा

***Date:04-11-22***

# जिनपिंगवाद की छाया

**डॉ. रहीस सिंह**

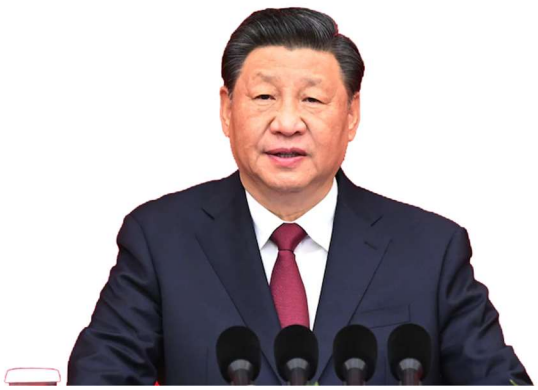

शी जिनपिंग अपने तीसरे कार्यकाल की ओर बढ़ चुके हैं और चीन एक नई तानाशाही की दिशा में। चीन के गांवों से लेकर शहरों तक में एक अजीब सी अशांति है जो भले ही दबा रखी गई हो, लेकिन जिस प्रकार से आंतरिक सुरक्षा बजट में चीन वृद्धि कर रहा है उससे यह लगता है कि इस तरह की अशांति एवं प्रतिरोध की निर्मित होरही प्रवृत्तियां इतिहास की नई पटकथा लिखने की क्षमता रखती हैं, लेकिन शी जिनपिंग नव चीनी समाजवाद या दूसरे शब्दों में कहें तो जिनपिंनिज्म (जिनपिंगवाद) को सांगोपांग के साथ चीन में प्रतिष्ठापित करने की कोशिश में हैं।

जिनपिंगवाद चीन के लोगों को किस सीमा तक रोजगार और सुरक्षा देगा, यह कहना मुकिल है लेकिन यह शी जिनपिंग की महत्त्वाकांक्षाओं को ठीक उसी प्रकार से पूरा करने के लिए समर्पित रहेगा जैसी माओत्से तुंग की महत्त्वाकांक्षाओं की पूर्ति का साधन 'ग्रेट लीपफॉरवर्ड और कल्चरल रिवोल्यूशन बनी थी। इसका नमूना दिख भी रहा है कि चीन के कई शहर लॉकडाउन से गुजर रहे हैं और चीन के शासक चीन को एक सुपर पावर बनाने के लिए ताइवान पर निशाना साध रहे हैं। क्या ऐसा नहीं लगता कि चीन जिस फाउंडान पर खड़े होकर अपनी ताकत का प्रदर्शन करने की कोशिश कर रहा है, वह उतना मजबूत नहीं जिसे दुनिया के कुछ विश्लेषक और चीनी शासक दिखाने की कोशिश कर रहे हैं ? इस बात से दुनिया परिचित ही होगी कि विश्व की दूसरी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था की वैश्विक मंदी (रिस्सेशन) के कारण सांस फूलती हुई दिख रही है। यह अलग बात है कि चीनी शासन की निरंकुशता और स्वतंत्र प्रेस का अभाव इस सच को बाहर नहीं आने देता।

सच यही है कि चीन इस समय घरेलू और अंतरराष्ट्रीय, दोनों ही बाजारों में मांग की गिरती हुई प्रवृत्ति का सामना कर रहा है। हालांकि यह प्रवृत्ति एकाएक नहीं उभरी है। ऐसी प्रवृत्तियां उस समय भी चीनी अर्थव्यवस्था में मौजूद थीं जब अमेरिकी अर्थव्यवस्था सबप्राइम संकट के चपेट में आई थी और विश्व बैंक के कुछ अर्थशास्त्रियों ने डि-कपलिंग की घोषणाकर चीन को ग्लोबल इकोनॉमिक लीडर के तौर पर पेश कर दिया था।ये प्रवृत्तियां तब भी मौजूद थीं यूरोजोन आर्थिक संकट से गुजर रहा था और यूरोप में मौजूद चीनी माल के बाजार सिकुड़ रहे थे और ये प्रवृत्तियां उस समय भी देखी गयीं जब वुहान वायरस का प्रसार पूरी दुनिया में हुआ था और चीन कोविड 19 के मामले में खुद को क्लीनचिट देने के बावजूद विश्वास के संकट (ट्रस्ट डेफिसिट) से गुजर रहा था। स्थितियों को और जटिल बनाया अमेरिका-चीन व्यापार युद्ध ने जिसका सीधा असर चीनी अर्थव्यवस्था की ग्रोथ पर पड़ा। आजचीनी मुद्रा युआन डॉलर के मुकाबले बेहद खराब प्रदर्शन कर रही है। चीनी वित्तीय बाजार अनिश्चितता से गुजर रहा है और चीनी केंद्रीय बैंक अर्थव्यवस्था में अतिरिक्त पैसा डालकर सब कुछ ठीक करने की कोशिश कर रहा है, लेकिन इतना तय है कि यदि चीनी अर्थव्यवस्था और नीचे गिरी तथा घरेलू अशांति का वातावरण बना तो जिनपिंग एशियाई शांति के लिए काफी नुकसानदेह होंगे।

जिनपिंग ने अपने दोनों कार्यकाल में पार्टी के अंदर मौजूद सभी प्रकार के विरोधियों को समाप्त कर चुनौतीविहीन तानाशाह बनने का रास्ता साफ कर लिया, लेकिन इसका यह मतलब कदापि नहीं है कि जिनपिंग जिस मॉडल को चीन पर थोप देंगे वह वैश्विक रूप से स्वीकार्य भी होगा या उसमें दुनिया को लीड करने की क्षमता और योग्यता भी होगी। वैसे भी जिनपिंगवादी चाइनीज मॉडल बहुत सी खामियों से सम्पन्न है जो चीन को संदिग्ध भी बनाती हैं, जिसमें 'बेल्ट एंड रोड इनीशिएटिव' से लेकर वुहान वायरस और जीरो कोविड नीति तक कई उदाहरण दिए जा सकते हैं। सबसे अहम बात यह है कि चीन बूढ़ा हो रहा है उसे जिनपिंगवाद जवान कैसे बना पाएगा? बूढ़ा चीन कम-से-कम कुलांचे तो नहीं भर सकता। वैसे भी चीन का रियल स्टेट सेक्टर में लंबे समय से बुलबुले संचयी आवृत्ति में बन रहे हैं। कुछ हद तक अब वे फूटने भी लगे हैं। इन सबके बीच जिनपिंग माओत्से तुंग और डेंग जियांग पिंग के बाद या उनसे भी आगे निकलकर सर्वाधिक ताकतवर नेता होने पर फोकस कर रहे हैं। यही वजह है कि जिनपिंग ने कम्युनिस्ट पार्टी बैठक में अपने आर्थिक मॉडल की बजाय ताइवान मुद्दे को वरीयता देना उचित समझा। दरअसल, जिनपिंग को पता है कि ताइवान, दक्षिण चीन सागर, क्वाड, ऑकस और दक्षिण एशियाई रणनीति (विशेषकर भारत विरोध) ऐसे विषय हैं जो उनके खिलाफ उपजने वाली प्रतिक्रियाओं के लिए ढाल साबित होंगे।

इसमें कोई संशय नहीं कि चीन की बूढ़ी आबादी चीनी अर्थव्यवस्था की उत्पादकता को और धीमा करेगी। जिनपिंग और उनका स्टैटिस्टिकल विभाग यह भलीभांति जानता भी है। यही वजह है कि चीन ने अपनी अर्थव्यवस्था में अतिरिक्त पूंजी

के प्रवाह को पर्याप्त मात्रा में बढ़ाया है, लेकिन ऐसा करते समय उसने यह ध्यान नहीं दिया कि अर्थव्यवस्था में बेतहाशा पूंजी की वृद्धि उसी प्रकार से आर्थिक गति को प्रभावित कर सकती है जिस प्रकार से एक सीमित क्षमता वाली पुरानी मोटर बाइक की क्षमता से अधिक भार बढ़ाने या निर्धारित गति से ज्यादा तेज रफ्तार देने पर इंजन हीट कर जाता है। कुछ आकलनों के अनुसार इस समय चीन पर कुलऋण जीडीपी का 275 प्रतिशत से 300 प्रतिशत तक है। ऋण की यह मात्राचीन की एक दूसरी तस्वीर ही दिखा रही है। इसमें से भी अधिकांश का निवेश प्रॉपर्टी बबल में किया गया था, इसलिए उत्पादकता को बढ़ाने में कामयाब होने की संभावनाएं भी बहुत कम थीं।

यही हुआ भी। इस प्रकार के निवेश से बीते दशक में भले ही चीन के सकल घरेलू उत्पाद की ग्रोथ बढ़ी हो जीडीपी ग्रोथ बढ़ी हो, लेकिन उसकी उत्पादकता में बड़ी गिरावट आई जिसके परिणाम सामने हैं। यह जिनपिंगवादी मॉडल का एक सामान्य सा उदाहरण है। इसे क्या माना जाए? कुल मिलाकर जिनपिंग की तानाशाही शायद जिनपिंगवादी मॉडल के बड़ेबड़े सुराखों पर पैबंद लगाने की एक युक्ति है जो चीन की सीमाओं से बाहर अपनाई जा रही चीनी आक्रामकता तक में देखी जा सकती है। अभी यह और बढ़ेगी, जिसके प्रभाव भारत की सीमा पर भी दिख सकते हैं।